ड्राइंग आफ़्टर

कार्टून, विभाजन और महिलाएँ

नासिफ़ मुहम्मद अली

अनुवाद : सुधा तिवारी
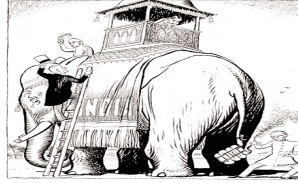
राजनीतिक हास्य रोज़मर्रा की सियासी ज़िंदगी के स्याह पहलुओं पर नज़र डालते हुए उन पर तंज़ कसता है। इसीलिए, राजनीतिक कार्टून राजनीतिक हास्य का एक ज़रूरी माध्यम होते हैं। दूसरे, प्रिंट के अन्य संयमित संचार माध्यमों की बनिस्बत कार्टून के साथ एक सलाहियत यह भी जुड़ी है कि वह बड़ी आसानी पक्षधरता तय कर लेता है; वह न केवल घनघोर रूप से आक्रामक और तंज़िया हो सकता है बल्कि किसी की भद्द पीटने की हद तक जा सकता है। सच यह है कि 'आक्षेप' के मामले में राजनीतिक कार्टून 'किसी भी माध्यम से कमतर नहीं हैं।' उनका 'प्रचार के अस्त्र के तौर पर' भी व्यापक इस्तेमाल किया जाता है।[1] कार्टून के ब्योरों की गहन विवेचना इतिहासकार को कार्टूनिस्ट के मंतव्यों से परे जा कर सोच सकने की गुंजाइश प्रदान करती है। मेडहर्स्ट और डिसूसा के अनुसार, 'राजनीतिक उद्धरण, साहित्यिक/सांस्कृतिक उल्लेख, व्यक्तिगत चरित्र लक्षण और पारिस्थितिक मुद्दे'[2] कार्टूनिस्ट के लिए बुनियादी सामग्री का काम करते हैं। एक तरफ़ यह बात कार्टून के पाठ और उसकी विवेचना में निहित सम्भावनाओं को रेखांकित करती है, तो दूसरी ओर ऐसा करने की चुनौतियों का भी स्मरण कराती है। इस संबंध में ऐलिजाबेथ रेफ़ई ने 'कार्टून बनाने की रीतियों से परिचय और तात्कालिक घटनाओं के व्यापक ज्ञान से लेकर दृष्टांतों के बीच तुलना करने जैसी क्षमता' संबंधी बहुमुखी साक्षरता की चर्चा की है।[3]

---

[1] थॉमस मिल्टन केमनित्ज़ (1973) : 84.

[2] मेडहर्स्ट और डिसूसा (1981) : 199–200.

[3] ऐलिजाबेथ रेफ़ई (2003).

अपनी प्रकृति में कार्टून वस्तुनिष्ठ नहीं, बल्कि व्यक्तिपरक होते हैं। एक तरह से यह व्यक्तिपरकता कार्टून को इतिहासकार के लिए और रुचिकर बना देती है; इससे इतिहास के एक विशेष काल में बने कार्टून पढ़ कर समाज में विद्यमान विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे में जानना आसान हो जाता है।

इस लेख में हमने ब्रिटिश कार्टूनिस्ट लेस्ली इलिंगवर्थ द्वारा *डेली मेल* के लिए बनाए गये कार्टूनों का भारत के विशेष संदर्भ में अध्ययन किया है। यह लेख इन कार्टूनों में 'महिलाओं' को हिंसा की विषय-वस्तु के तौर पर समझने का प्रयास करता है। इसमें यह देखने की कोशिश की गयी है कि एक कार्टूनिस्ट के तौर पर इलिंगवर्थ अपने कार्टूनों में हिंसा और उसके पीड़ित की चर्चा करते हुए महिलाओं को एक प्रतीक के रूप में किस तरह गढ़ते हैं? महिलाओं को निहायत गहन राजनीतिक परिस्थितियों के बीच एक विषय के तौर पर रख कर और उनका निरूपण करते हुए वे कौन-सी दृश्य-गूढ़ताएँ इस्तेमाल करते हैं?

कार्टूनों का अध्ययन

कार्टून एक साथ विनोदपूर्ण, भावुक, पक्षपाती, अत्यधिक आलोचनात्मक, मज़ाकिया और खिलंदड़ हो सकते हैं। ये वे क्षेत्र हैं जहाँ सम्पादकीय और प्रिंट संचार के दूसरे माध्यम क़दम नहीं रख सकते। इस संबंध में यह बात भी नहीं भूलनी चाहिए कि एक कार्टूनिस्ट अपना संदेश पहुँचाने में केवल अधिक प्रखर और प्रत्यक्ष ही नहीं होता बल्कि साथ में वह, 'एक सम्पादकीय लेखक होता है जो एक चित्र के रूप में मुख्य लेख की प्रस्तुति करता है।'[4] कार्टूनिस्ट कुछ ऐसे साधनों और तकनीकों का उपयोग करते हैं जो न सिर्फ़ मौखिक शब्दाडम्बर, अपितु मुद्रित संचार के दूसरे साधनों से बहुत अलग होती हैं। वे एक साथ भाषिक और ग़ैर-भाषिक साधनों का इस्तेमाल करते हैं,[5] जिनसे संदेश के सम्प्रेषण में ख़ास सहूलियत मिलती है।

कार्टून के विषय और प्रभाव का वर्णन करने हेतु मेडहर्स्ट और डिसूसा ने तीन बुनियादी परिप्रेक्ष्यों की बात की है — मनोविश्लेषक, समाजशास्त्रीय, और अभिव्यक्तिशील। जहाँ एक ओर, मनोविश्लेषण कार्टून में प्रतीकात्मकता के महत्त्व को रेखांकित करता है, वहीं दूसरी तरफ़ वह न सिर्फ़ कार्टून के निर्माण बल्कि उसकी व्याख्या, संक्षेपण और विस्थापन में भी एक अहम भूमिका निभाता है। बाद के दो दृष्टिकोण, समाजशास्त्रीय और अभिव्यक्तिशील, संस्कृति और संस्कृति के उन प्रतीकों पर बात करते हैं जिनके आधार पर कार्टून या व्यंग्य-चित्र की रचना की जाती है। हालाँकि यहाँ यह ध्यान देने लायक़ है कि ये सभी दृष्टिकोण अपने दावों के बावजूद, कार्टून और व्यंग्य-चित्रों के वर्गीकरण और विश्लेषण का एक संरचित ढाँचा प्रदान करने में विफल रहे हैं। उनकी सीमा यह है कि वे कार्टून को महज़ एक आलंकारिक रूप के तौर पर देखने की कोशिश करते हैं। इसलिए इनका ध्यान केवल कार्टून के विश्लेषण पर केंद्रित नहीं होता, बल्कि वे यह भी बताने लगते हैं कि कोई कार्टून कब और कैसे बना और इसका सूक्ष्म अवलोकन किस तरह किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, कार्टून की रचना में कौन से अंग-उपांग शामिल किये गये। एक कार्टूनिस्ट संचार के दूसरे प्रकारों के इतर कुछ ऐसे विशिष्ट साधनों और तकनीकों का उपयोग करता है जिनमें भाषिक और ग़ैर-भाषिक दोनों युक्तियाँ शामिल होती हैं।

संजुक्ता सुंदेरासन कहती हैं, 'व्यंग्य-चित्र ... हास्य की संस्कृति और आलोचना की संस्कृति के समन्वय को मूर्त रूप देने का प्रयास करता है।' 'गम्भीरता और हास्य के बृहत ढाँचे में निहित अनुभव, पहचान, विचारधारा, इत्यादि' जैसे तत्त्व व्यंग्य-चित्र की विभिन्न परतों को रेखांकित करते हैं। इसलिए पाठक ऐसे किसी चित्र को देखते समय एक 'दृश्य दस्तावेज़' के सम्पर्क में होता है। इससे यह स्पष्ट

[4] इसाबेल सिमेरल जॉनसन (1937) : 44.
[5] सनी, अब्दुल्ला व अन्य (2012) : 156.

होने के अलावा कि इस प्रकार की छवियाँ अपने प्रकट अर्थ से कहीं कुछ ज़्यादा बयान कर सकती हैं, यह संकेत भी मिलता है कि किसी कार्टून में क्या देखा जाना चाहिए या दूसरे शब्दों में, उससे और क्या पाया जा सकता है।[6]

बनावट के सिद्धांतों का उपयोग करके कार्टून में प्रवृत्ति, विषमता, टिप्पणी, और अंतर्विरोध के बुनियादी रूपों को एक ठोस स्वरूप दिया जाता है। इनमें विभिन्न घनता की रेखाओं, चरित्रों और वस्तुओं का आकार, शारीरिक रूप की अत्युक्ति, बैलून (कार्टून का वह हिस्सा जिसमें भाषिक संवाद को गोल या किसी अन्य आकार के घेरे में रखा जाता है) या शीर्षक में चित्रों की स्थिति के निर्धारण इत्यादि का उपयोग शामिल है।[7] इन व्यापक पद्धतियों के अलावा कार्टूनिस्ट अपना काम पूरा करने के लिए और भी कई तकनीकों का सहारा लेता है।

लेस्ली गिल्बर्ट इलिंगवर्थ

समकालीन डेविड लो को अब तक का सर्वश्रेष्ठ राजनीतिक कार्टूनिस्ट मानते हैं। लेकिन, अगर हमने इस अध्ययन के केंद्र में इलिंगवर्थ को रखा है तो यह कोई संयोग नहीं है। इलिंगवर्थ का चुनाव करने के पीछे कुछ साफ़ कारण हैं। वास्तव में, यह भविष्यवाणी की जा चुकी है कि अंततोगत्वा इलिंगवर्थ डेविड लो से अधिक सफल होंगे।

राजनीतिक पृष्ठभूमि

पाठकों के लिए कार्टूनों का संदर्भ स्पष्ट करने के लिए 1946–47 की राजनीतिक पृष्ठभूमि का विवरण देना ज़रूरी है। यह इस लेख का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। दूसरे विश्व-युद्ध के बाद ब्रिटिश सरकार ने भारत की बड़ी राजनीतिक पार्टियों से बातचीत करने की कई कोशिशें कीं, चूँकि भारत के अंदरूनी हालात उसके हाथों से फिसलते जा रहे थे इसलिए वह भारत को एक सामान्य स्थिति में छोड़ कर जाना चाहती थी। 1946 में सरकार ने एक तीन-सदस्यीय प्रतिनिधि-मण्डल भेजा। ये तीन सदस्य थे: ब्रिटिश युद्ध कैबिनेट के सदस्य स्टैफ़र्ड क्रिप्स, राज्य सचिव पैथिक लॉरेंस, और एक दूसरे कैबिनेट सदस्य विक्टर एलेग्जेंडर। यह प्रतिनिधि-मण्डल एक ऐसे समय में आया था जब क़ौमी दंगों और अकाल के कारण भारतीय समाज टूटने के क़गार पर पहुँच चुका था। इसलिए पूरा विचार-विमर्श, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच गठबंधन करवा कर अंतरिम काल के लिए एक हिंदुस्तानी सरकार बनाने की दिशा में मुड़ गया। इसके पीछे मक़सद यह था कि अंतरिम सरकार प्रशासनिक उपायों का उत्तरदायित्व लेने के साथ-साथ सत्ता के हस्तांतरण का निरीक्षण भी कर सके। विभिन्न उपाय पेश करने के बावजूद यह प्रस्ताव विफल रहा और लीग के असहयोग के मद्देनज़र वाइसराय ने सरकार बनाने की ज़िम्मेदारी कांग्रेस के ऊपर छोड़ दी। कांग्रेस ने इसीलिए दो सितम्बर को अंतरिम सरकार बनाने का फ़ैसला किया। बातचीत के प्रयास जारी थे और बाद में मुस्लिम लीग भी इसमें शामिल हो गयी मगर इन दो पक्षों के बीच का वैमनस्य आसानी से शांत नहीं होना था। वैमनस्य की यह भावना उपनिवेश के दो सम्प्रदायों के बीच इस क़दर बढ़ चुकी थी कि उसे देश का रक्त-रंजित विभाजन ही शांत कर सकता था।[8]

यह कहना ग़लत नहीं होगा कि विभाजन के दंगों में दोनों तरफ़ की औरतों को ही सबसे ज़्यादा ज़ुल्म झेलना पड़ा। एक तरफ़ उन्हें दंगाइयों के हाथों इसलिए यातनाएँ सहन करनी पड़ीं क्योंकि उन्हें

[6] संजुक्ता सुंदेरासन (2006) : 8.
[7] मेडहर्स्ट और डिसूसा (1981).
[8] स्टैनली वोल्पर्ट (2006) : 9–11.

विरोधी समुदाय को बदनाम करने के लिए एक कमज़ोर निशाने की तरह देखा गया। दूसरी तरफ़, उन्हें अपने ही समुदाय की ओर से भी इसी प्रकार के कष्ट झेलने पड़े क्योंकि उनका समुदाय इन औरतों की मौत तो सहन कर सकता था, लेकिन अपनी इज़्ज़त कलंकित होते हुए नहीं देख सकता था।[9] इन कार्टूनों को इस नज़रिये से देखना स्त्री के प्रतीक को अर्थ की एक नयी भंगिमा प्रदान करता है। उन कार्टूनों को इस पहलू के साथ रख कर देखना दिलचस्प होगा। इस तथ्य के बावजूद कि बाद में कार्टूनों में लिंग भेद का इस्तेमाल एक तकनीक बन गया, हम यहाँ इस बात पर अलग से तवज्जो देंगे कि कार्टूनिस्ट ने औरतों के शरीर को प्रतीक की तरह बरतते हुए किन तरीक़ों का उपयोग किया है।

लेस्ली गिल्बर्ट इलिंगवर्थ

लेस्ली गिल्बर्ट इलिंगवर्थ को एक ऐसे व्यक्ति के तौर पर जाना जाता है जिन्होंने ऐसे कार्टून बनाए जिन्हें '... चर्चिल के नेतृत्व और मित्र राष्ट्रों की फ़ौजी जीतों पर टिप्पणी करते हुए, दूसरे विश्व युद्ध के दौरान ब्रिटेन का मनोबल बढ़ाने वाला' माना जाता था।[10] पाठकों तक ये कार्टून *डेली मेल* के माध्यम से पहुँचे, जो '... युद्ध में फँसे लोगों के प्रति सहानुभूति रखता था ...' और बाज़ार में उसकी अच्छी पहुँच थी।[11] इसलिए *डेली मेल* ने जब एक राजनीतिक कार्टूनिस्ट के पद का विज्ञापन निकाला तो इलिंगवर्थ को यह अपने देश की सेवा करने का सबसे बेहतरीन मौक़ा नज़र आया। लेकिन क्या यही एक कारण था? नहीं। *डेली मेल* में तनख़्वाह अच्छी थी और स्वतंत्र चित्रकार के तौर पर काम करने के पिछले अनुभवों के बरअक्स यह प्रस्ताव अधिक टिकाऊ और दिलचस्प था। अपनी तरफ़ से इलिंगवर्थ को लगता था कि कार्टूनिस्ट को व्यावहारिक होना चाहिए और वे ख़ुद को 'अत्यधिक लोलुप प्रवृत्ति'[12] का समझते थे। उन्होंने अख़बार को यह स्पष्ट कर दिया था कि उनसे कभी यह दरियाफ़्त नहीं किया जाएगा कि उन्हें किस तरह का कार्टून बनाना है। उनका मानना था कि बेहतरीन सम्पादक वह होता है जो काम की तरफ़ देखे और कह दे कि उसे ठीक ऐसा ही काम चाहिए था! इस कथन का आधारभूत तथ्य यह था कि इलिंगवर्थ अपने काम से सम्पादकों को ख़ुश रखते थे। उन्होंने सरकार की प्रोपेगेंडा सामग्री में भी योगदान दिया था और हवाई प्रचार के लिए तैयार की गयी पुस्तिकाओं के लिए भी हस्ताक्षरित तथा हस्ताक्षरहीन कार्टून बनाए थे। इस काम के लिए उनके *डेली मेल* में छपे कुछ कार्टूनों का भी इस्तेमाल किया गया था।

बहुत से लोग उनके समकालीन डेविड लो को अब तक का सर्वश्रेष्ठ राजनीतिक कार्टूनिस्ट मानते हैं। लेकिन, अगर हमने इस अध्ययन के केंद्र में इलिंगवर्थ को रखा है तो यह कोई संयोग नहीं है। इलिंगवर्थ का चुनाव करने के पीछे कुछ साफ़ कारण हैं। वास्तव में, यह भविष्यवाणी की जा चुकी है कि अंततोगत्वा इलिंगवर्थ डेविड लो से अधिक सफल होंगे। यह *पंच* के भूतपूर्व सम्पादक ने *गार्डियन* में इलिंगवर्थ को श्रद्धांजलि देते हुए लिखा था कि, 'लो के कार्टून कुछ त्वरित स्थितियों के बारे में होते हैं जिन्हें जल्दी भुला दिया जाता है, इसकी बनिस्बत इलिंगवर्थ के कार्टून गहराई में जाते हैं, अपने श्रेष्ठतम को छूने की कोशिश करते हैं, वे अपनी शानदार शैली में शरारती चुटकुले के बजाय व्यंग्य रचते हैं; व्यावहारिक के बजाय कूटनीतिक का चुनाव करते हैं।'[13]

इन दो कार्टूनिस्टों के बीच का भेद यहीं ख़त्म नहीं होता; ये दोनों, अगर दो अलग पीठों की नहीं तो कार्टून विधा की दो एक़दम अलग शैलियों का प्रतिनिधित्व अवश्य करते हैं। यहाँ किसी सैद्धांतिक

---

[9] निवेदिता मेनन और कमला भसीन (1993).

[10] http://www.llgc.org.uk/illingworth/index_s.htm.

[11] मार्क ब्रायंट (2009) : 19.

[12] वही : 16

[13] मार्क ब्रायंट (2009) : 13.

विवाद की तरफ़ इशारा नहीं किया जा रहा है, बल्कि मुद्दा कुल इतना है कि कार्टून के प्रति इन दोनों कार्टूनिस्टों की दृष्टि और शैली का अंतर इतना स्पष्ट था कि वह आम पाठक को भी प्रत्यक्ष समझ आ जाता था।

इलिंगवर्थ ब्योरों का बहुत ध्यान रखते थे। वे अपने काम में कदाचित ही कोई जगह ख़ाली छोड़ते थे। उनके रेखा-चित्र शाब्दिक और लाक्षणिक, दोनों अर्थों में भरे हुए लगते हैं। उनके रेखा-चित्र तीक्ष्ण और साफ़ होते हैं; सपाट और इकहरी लकीरों के कारण उनमें शरीर टेढ़े-मेढ़े न होकर सजीव दिखते हैं। इसी तरह, वे कार्टून की निर्धारित जगह का छायाओं और रेखांकन के साथ इतना सम्पूर्ण इस्तेमाल करते हैं कि एक सामान्य दर्शक उनके कार्टून को स्केच समझने की ग़लती भी कर सकता है।[14] परंतु, डेविड लो के साथ ये बात नहीं है, वे अपने पात्र न्यूनतम लकीरों से बनाते हैं।

दूसरे, इन दोनों कार्टूनिस्टों के कार्टून को थोड़ा नज़दीकी से देखने पर यह समझा जा सकता है कि लो अपने कार्टून और उसमें पात्रों के अवस्थापन को कोई ख़ास अहमियत नहीं देते। उनके कार्टूनों की पृष्ठभूमि में भूदृश्य, क्रिकेट का मैदान, घर इत्यादि होते हैं और कई बार पूरी जगह रिक्त भी छोड़ दी जाती है। दूसरी तरफ़, इलिंगवर्थ पृष्ठभूमि को काफ़ी अहमियत देते हैं। उनके कार्टून के चरित्रों का संदेश से सीधा संबंध होता है। उनमें ब्योरों की भी भरमार होती है। हालाँकि उनके सारे कार्टून श्वेत-श्याम ही हैं लेकिन, वे अपने चित्रों को काले रंग की विभिन्न रंगतों और रेखाओं की अलग-अलग मोटाई देकर उन्हें स्पष्ट, विस्तृत और 'रंगीन' बना देते हैं। इस अध्ययन के लिए इलिंगवर्थ के चयन
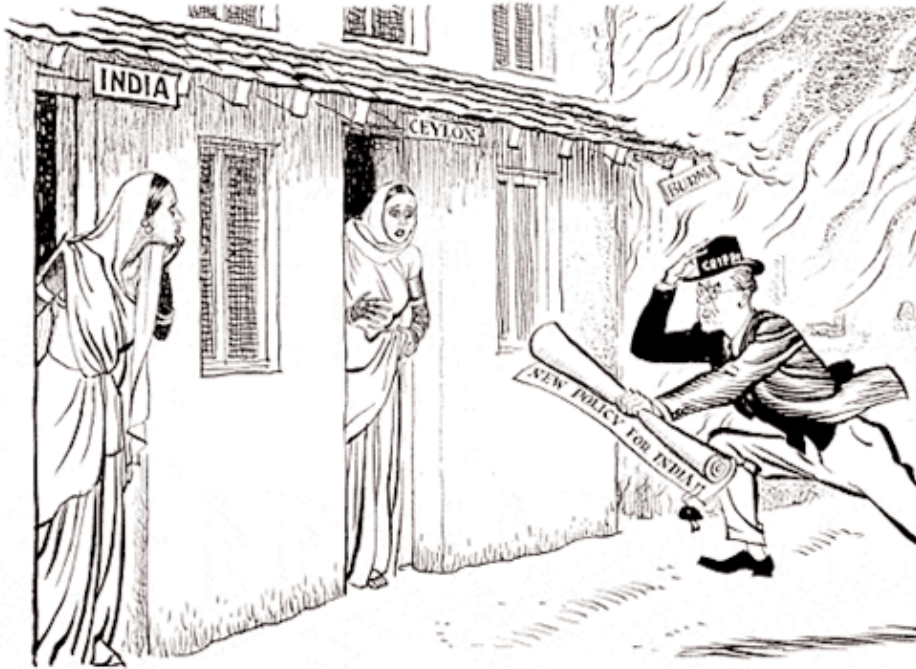
आकृति-1 (*डेली मेल,* 13 मार्च 1942; साभार: www.cartoons.ac.uk)

[14] वही : 25.

का तीसरा कारण यह है कि भारत के राजनीतिक परिदृश्य के प्रति उनका एक ख़ास दृष्टिकोण है। हालाँकि लो ने भारत के हालात पर भी कई कार्टून बनाए हैं, किंतु व्यंग्य की अनुपस्थिति के कारण उनके ये कार्टून सिर्फ़ टिप्पणी बन कर रह जाते हैं। वहीं इलिंगवर्थ के कार्टून व्यंग्य रचते हुए कटाक्ष की हद तक चले जाते हैं।

यह सब कार्टूनिस्ट डेविड लो का आकलन करने के लिए नहीं कहा जा रहा है; अब तक के सभी राजनीतिक कार्टूनिस्टों में श्रेष्ठ कार्टूनिस्ट की हैसियत रखने वाले व्यक्तित्व के बारे में ऐसा करना उचित भी नहीं होगा। हमारा उद्देश्य यहाँ यह देखना है कि उनके कार्टून एक इतिहासकार के लिए कितने उपयोगी सिद्ध होंगे। इतिहासकार कार्टूनिस्ट के कार्टून में निहित संदेश को ही नहीं देखता बल्कि, वह कार्टून की मुख़्तलिफ़ परतों को खोलते हुए कार्टूनिस्ट और तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों की भी पड़ताल करता है। असल में, वह सतही विवरण से संतुष्ट न होकर अतिरिक्त जानकारी के लिए प्रयास करता है। इलिंगवर्थ और लो का इस दृष्टिकोण से आकलन करने पर यह साफ़ हो जाता है कि लो के मुक़ाबले इलिंगवर्थ एक समाजशास्त्री को कहीं अधिक सारगर्भित विचार देते हैं।

इन तथ्यों को मिला कर देखें तो उनके कार्टूनों का अध्ययन और भी आवश्यक हो जाता है। अध्ययन की प्रासंगिकता और सीमा को ध्यान में रखते हुए हमने यहाँ उन्हीं कार्टूनों का विश्लेषण किया है जिनमें महिलाओं की छवि का उपयोग किया गया है। हम यहाँ कुछ कार्टूनों को एक साथ रख कर एक कहानी की शक्ल में पढ़ने की कोशिश करेंगे।

इलिंगवर्थ और भारतीय स्त्री

इनमें से पहला कार्टून *डेली मेल* में 13 मार्च 1942 को छपा था। इसका शीर्षक था : 'न्यू पॉलिसी फ़ॉर इंडिया।' इस कार्टून में क्रिप्स मिशन पर टिप्पणी की गयी थी (आकृति-1)। यह एक ऐसा वक़्त था जब दक्षिण एशिया में परिस्थितियाँ तेज़ी से बदल रही थी; युद्ध की छाया भारत पर भी पड़ने लगी थी। ब्रिटिश साम्राज्य के लिए यह गहरी परेशानी का सबब बन चुका था।

सत्ता को हिंदुस्तानी अवाम और नेताओं के समर्थन की सख़्त ज़रूरत थी। लेकिन जनता और लीडरान सरकार से कन्नी काट रहे थे। इसकी एक वजह यह थी कि प्रथम विश्व युद्ध के दौरान भारत के सहयोगी रुख़ के बावजूद ब्रिटिश सरकार ने उनके साथ ठीक बर्ताव नहीं किया था। इन स्थितियों के मद्देनज़र क्रिप्स ने ब्रिटिश युद्ध कैबिनेट को एक मसौदे की घोषणा के लिए राज़ी कर लिया जिसमें भारत को युद्ध ख़त्म होने के उपरांत स्वतंत्र-उपनिवेश / अधिराज्य का दर्जा देने का वादा किया गया था।[15] उपरोक्त कार्टून में हम देख सकते हैं कि किस तरह क्रिप्स एक जलती हुई इमारत (कदाचित् ब्रिटिश साम्राज्य) की तरफ़ बेसब्र होकर दौड़ रहे हैं, जिसका अच्छा ख़ासा हिस्सा— बर्मा तक, पहले ही जल चुका है। आग की लपटें भारत और सीलोन (श्री लंका) की तरफ़ तेज़ी से फ़ैल रही हैं। इन दो देशों को औरत के रूप में दर्शाया गया है, जो पूरी तरह भयभीत और किसी तारणहार के इंतज़ार में खड़ी दिखाई देती हैं। लेकिन क्रिप्स के हाथ में जो योजना दिखाई दे रही है वह ख़ालिस भारत के लिए है जिससे यह इंगित होता है कि ब्रिटेन के लिए सीलोन की तुलना में भारत का साथ ज़्यादा ज़रूरी है। और वह उसे किसी सूरत में हाथ से नहीं जाने देना चाहता।

क्रिप्स मिशन की विफलता के बाद परिस्थितियाँ बद से बदतर हो गयीं। अपने-अपने कारणों से दोनों पक्ष यानी ब्रिटिश सरकार और भारतीय नेता किंकर्तव्यविमूढ़ हो चुके थे। यह बात गाँधी के रवैये से स्पष्ट दिखती थी। गाँधी ने ब्रिटिश सरकार से कहा था कि वह भारत को ईश्वर या अराजकता के हवाले छोड़ दें। उन्होंने कहा कि वे ब्रिटिश शासन के व्यवस्थित अनुशासन प्रिय अराजकता के भीतर

[15] सुमित सरकार (1983) : 385-386.

आकृति-2 (*डेली मेल,* 14 मई 1946; साभार: www.cartoons.ac.uk)

रहने के बजाय भारत को 'पूर्ण अराजकता' की तरफ़ जाते देखना ज़्यादा पसंद करेंगे। कांग्रेस ने इसीलिए 8 अगस्त 1942 को भारत छोड़ो प्रस्ताव पारित किया और इसके साथ ही एक जन संघर्ष का भी आह्वान किया। नेताओं की गिरफ़्तारी के बाद, प्रत्येक भारतीय के ऊपर यह ज़िम्मेदारी आन पड़ी थी कि वह स्वयं अपना मार्गदर्शन करे और आंदोलन को आगे ले जाए। गाँधी ने अपने अनुयायियों को 'करो या मरो' का नारा दिया था। परंतु, इसके पहले कि आंदोलन शुरू हो पाता, 9 अगस्त की सुबह सभी शीर्ष नेताओं को गिरफ़्तार कर लिया गया।[16]

भारत ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण से बाहर होता जा रहा था। इसलिए सरकार ने भारतीय उप-महाद्वीप का भविष्य तय करने और विभिन्न दलों के बीच समझौता करवाने की ख़ातिर एक नया प्रस्ताव— कैबिनेट मिशन भारत रवाना किया।[17] हालाँकि वाइसराय इस विचार के पक्ष में नहीं थे क्योंकि उन्हें विश्वास नहीं था कि चंद हफ़्तों की चर्चा से इस समस्या का कोई हल निकल सकता है।[18] दूसरे शिमला सम्मेलन के बावजूद भारत की दो बड़ी पार्टियाँ— कांग्रेस और मुस्लिम लीग, एक-दूसरे से बात करने को तैयार नहीं थीं। वास्तव में दोनों राजनीतिक दल एक-दूसरे से बहुत दूर जा चुके थे। दोनों पक्ष यह दावा करते रहे कि उन्होंने अपनी तरफ़ से मेल-मिलाप करने में कोई कसर नहीं रखी, लेकिन सच्चाई यह थी कि कोई भी पक्ष अपने रवैये से टस से मस नहीं हुआ। अंततः इस तरह शिमला सम्मलेन विफल हो गया।[19] *डेली मेल* में 14 मई को 'सिविल वार ऐंड फैमिन थ्रेटन इंडिया' शीर्षक से एक कार्टून छपा जिसमें भारतीय नेताओं को सत्ता के लिए रस्साकशी करते दिखाया गया है (आकृति- 2)।

---

[16] वही : 389-390.

[17] मेटकॉफ़ और मेटकॉफ़ (2001) : 215.

[18] पर्सिवल वैवेल और पेंडेरल मून (1973) : 206.

[19] वही : 267.
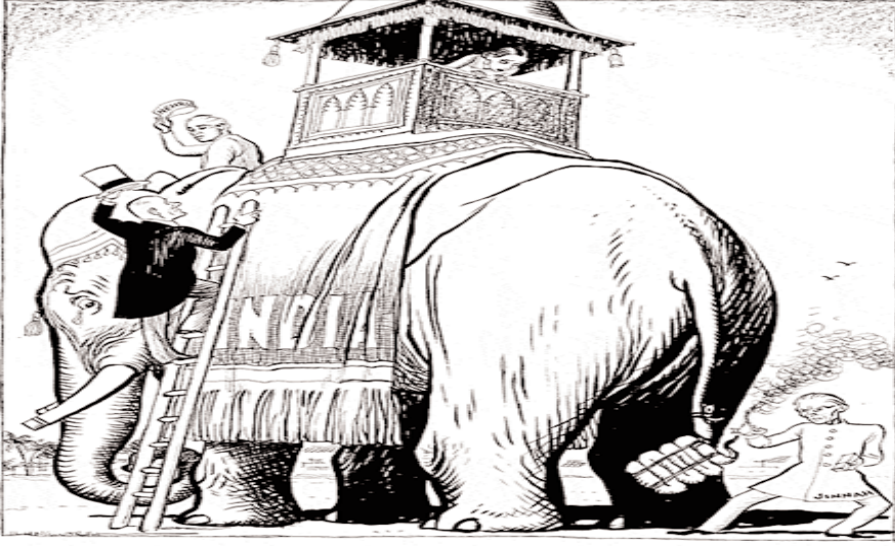
आकृति–3 (*डेली मेल,* 2 सितम्बर 1946; साभारः www.cartoons.ac.uk)

कार्टून में भारत को एक ऐसी डरी–सहमी स्त्री के रूप में दर्शाया गया है जो आसपास मँडराते बाघ और भेड़िये—प्रतीकात्मक रूप से गृहयुद्ध और अकाल से घिरती जा रही है। कार्टून में चित्रित पुरुष गाँधी, जिन्ना, और क्रिप्स हैं (सब पेड़ के ऊपर सुरक्षित बैठे हुए हैं), इनमें गाँधी और जिन्ना को नये संविधान को लेकर आपस में लड़ते हुए दिखाया गया है, जबकि स्त्री जिसके हाथों में एक बच्चा भी है, जंगली जानवरों के आक्रमण के बीच असहाय खड़ी है। कार्टूनिस्ट इस चित्र के ज़रिये हिंदुस्तानी
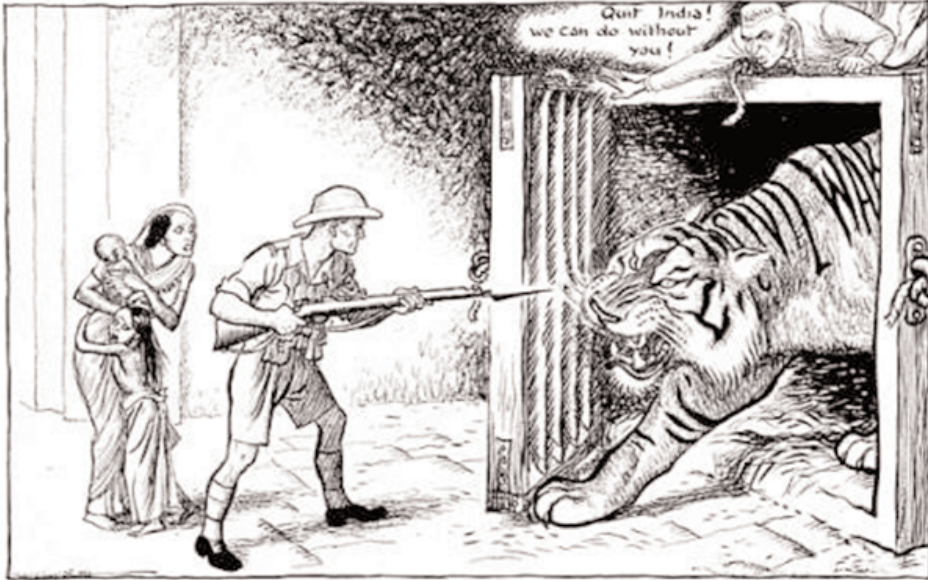
आकृति–4 (*डेली मेल,* 17 दिसम्बर 1946; साभारः www.cartoons.ac.uk)

नेताओं की आलोचना कर रहा है, जो उसके अनुसार जंगल के तमाम ख़तरों से सुरक्षित बैठे हैं। यहाँ कार्टूनिस्ट ने बड़े ही प्रभावशाली ढंग से औपनिवेशिक सरकार को गृह-युद्ध और अकाल जैसी दो बड़ी त्रासदियों की ज़िम्मेदारी से छुटकारा दिला दिया है। विडम्बना ये है कि वैवेल ने ख़ुद स्वीकार किया था कि अकाल का हमला औपनिवेशिक सरकार द्वारा 'अच्छी तरह से प्रशासित' प्रांतों में अधिक हुआ था। वैवेल की यह स्वीकृति औपनिवेशिक सरकार की विफलता को रेखांकित करती थी।[20] लेकिन कार्टूनिस्ट ने इस तथ्य को बड़ी आसानी से अनदेखा कर दिया।

कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच बातचीत के कई दौरों और समझौते की कोशिशों, तथा जिन्ना और उनकी कार्यकारी समिति द्वारा कैबिनेट मिशन के हालिया प्रस्ताव की नामंज़ूरी के बाद कांग्रेस अंतरिम सरकार बनाने पर राज़ी हो गयी थी। यह इसलिए सम्भव हुआ था क्योंकि लीग ने जिस सूत्र की माँग (मुस्लिम और हिंदू सदस्यों की समतुल्यता, और कई अन्य मसले) की थी उसे अस्वीकार कर दिया गया था। लीग ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें कैबिनेट मिशन के प्रस्तावों की नामंज़ूरी का कारण कांग्रेस का हठ और ब्रिटिश सरकार द्वारा मुसलमानों के विश्वास का उल्लंघन बताया गया। उन्होंने यह संकल्प लिया कि पाकिस्तान हासिल करने के लिए अब प्रत्यक्ष कार्रवाई का वक़्त आ गया है। लीग ने इस उद्देश्य को पाने के लिए अपने अनुयायियों से गुहार लगाई कि वे हर तरह का बलिदान करने के लिए तैयार रहें।[21] हालाँकि जिन्ना प्रत्यक्ष कार्रवाई के कार्यक्रम को लेकर स्वयं भी आश्वस्त नहीं थे। उन्हें सिर्फ़ इतना पता था कि यह एक अवैधानिक आंदोलन बनने जा रहा था। इसके तहत मुस्लिम जनता से 16 अगस्त को एक व्यापक हड़ताल तथा क़स्बों और गाँवों में जन-बैठकें करने का आह्वान किया जा रहा था। सरकार को डर था कि इसकी वजह से टकराव बढ़ेगा,[22] जो वाक़ई सच साबित हुआ क्योंकि

आकृति-5 (*डेली मेल,* 20 मई 1947; साभार : www.cartoons.ac.uk)

[20] वैवेल और मून : 202.

[21] मानसेर्घ और मून (1979) : 135-9.

[22] वही : 174.

हड़ताल के कारण कलकत्ता में कई जगह दंगे–फ़साद और टकराव की वारदात हुईं।[23] लीग की अस्वीकृति के बाद वाइसराय ने नेहरू को अंतरिम सरकार बनाने का न्यौता भेजा।[24] कुछ और विचार–विमर्श के बाद आख़िरकार 2 सितम्बर, 1946 को कांग्रेस की अगुवाई में अंतरिम सरकार सत्ता में आ गयी।[25] इस तरह 2 सितम्बर को जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में नयी सरकार ने शपथ ली।[26]

उसी दिन 'नेहरू राइड्स दी इंडियन ऐलीफैंट' शीर्षक से छपे कार्टून में तत्कालीन वाइसराय आर्किबाल्ड वैवेल को नेहरू की तरफ़ हाथ हिलाते हुए दिखाया गया है, जो इंडिया नामक हाथी की सवारी करने की तैयारी में दिख रहे हैं (आकृति–3)। हौदे पर बैठी एक भयातुर स्त्री, जो स्पष्ट तौर पर सामान्य जन की प्रतीक है, हमारा ध्यान नीचे खड़े जिन्ना की तरफ़ ले जाती है। जिन्ना हाथी पर बैठी सवारियों को नुक़सान पहुँचाने के लिए हाथी की पूँछ से बँधे पटाखों में आग लगा रहे हैं। इस कार्टून से ज़ाहिर होता है कि जिन्ना और उनकी पार्टी प्रत्यक्ष कार्रवाई के द्वारा नयी सरकार को नुक़सान पहुँचाने की पूरी कोशिश कर रहे थे।

1946 के आख़री महीनों में भारतीय उप–महाद्वीप दंगों और क़त्ले–आम की गिरफ़्त में आ चुका था। बंगाल, पंजाब, संयुक्त प्रांत, बिहार आदि में हिंसा कम होने का नाम नहीं ले रही थी।[27] 17 दिसम्बर को को *डेली मेल* में 'बट कैन दे?' के सवालिया शीर्षक से एक कार्टून प्रकाशित हुआ। कार्टून को देखकर लगता है कि यह सवाल एक उपहास है (आकृति–4)।

इस कार्टून में गृहयुद्ध के प्रतीक के तौर पर एक ख़ूँख़ार बाघ को पिंजरे से बाहर निकलते हुए दिखाया गया है। कांग्रेस के प्रतिनिधि नेहरू पिंजरे को खोल तो रहे हैं लेकिन कायरता के कारण उसके ऊपर बैठे हैं। सुरक्षित जगह पर बैठे हुए नेहरू अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए कह रहे हैं और दावा

आकृति–6 (*डेली मेल,* 28 अगस्त 1947; साभार: www.cartoons.ac.uk)

[23] वही : 239–40.

[24] वही : 188.

[25] सुमित सरकार और सब्यसाची भट्टाचार्य (2007) : 297–298.

[26] सुमित सरकार : 431.

[27] वही : 432–33.

कर रहे हैं कि वे उनके बग़ैर भी काम चला सकते हैं। इस कार्टून में कार्टूनिस्ट कांग्रेस नेतृत्व का उपहास करता है और उन पर हिंसा और गृहयुद्ध को हवा देने की आंशिक ज़िम्मेदारी का आरोप लगाता है। वह इसका सामना करने में कांग्रेस की असमर्थता पर टिप्पणी करता है। दूसरी तरफ़, ब्रिटिश साम्राज्य का प्रतिनिधित्व करता एक सिपाही बड़ी बहादुरी से उस जंगली जानवर और असहाय औरत के बीच डटकर खड़ा है। यहाँ भी असहाय स्त्री भारतीय जनता के प्रतीक की तरह खड़ी है। इस कार्टून में स्त्री के साथ दो बच्चे भी दिखाए गये हैं, जिनमें से एक लड़की है। कार्टून के शीर्षक में जो प्रश्न पूछा गया था, उसका विस्तार इस तरह किया जा सकता है— बहादुर और योग्य ब्रिटिश अफ़सरों के सहयोग के बिना भारतीय नेता क्या कर सकते हैं!

1947 के आरम्भ में भी राजनीतिक परिस्थितियाँ सँभलने का नाम नहीं ले रही थीं।[28] 20 मई, 1947 को प्रकाशित कार्टून, 'फ्री इंडिया' (आकृति-5), में इस विडम्बना की ओर संकेत किया गया है कि दंगों और मार-काट की व्यापक विभीषिका के बावजूद गाँधी, कांग्रेस, अमेरिका के हमदर्द, और ब्रिटिश साम्राज्य के ख़ात्मे के पैरोकार (ब्रिटेन के ऐसे नेता जो भारत में साम्राज्यवादी शासन की समाप्ति का समर्थन करते थे) अंग्रेजों को ही भारत की सबसे बड़ी समस्या समझते थे।

इस कार्टून में स्त्री आम जनता के प्रतीक के रूप में आती है। अपने बच्चे के साथ खड़ी यह स्त्री आसपास घट रही घटनाओं से भयभीत है। यहाँ गाँधी का चित्रण विशेष ध्यान खींचता है। अपने आस पास हो रही मार-काट और दंगों की घटनाओं के बावजूद गाँधी बड़े तन्मय भाव से चरखा चला रहे हैं। कार्टून से यह संदेश उभरता है कि जब रोम जल रहा था तब नीरो बाँसुरी बजा रहा था! यहाँ कार्टूनिस्ट इलिंगवर्थ एक बार फिर, तथ्यों की अनदेखी करते हुए ब्रिटिश सरकार के हाथों में खेलते नज़र आते हैं। अंतहीन वार्ताओं और हिंसा के ताण्डव से दु:खी गाँधी नोआखाली जैसे दंगा प्रभावित गाँवों के लिए निकल चुके थे। बाद में उन्होंने कलकत्ता, बिहार, और दिल्ली में ऐसी ही कई हिंसा-प्रभावित बस्तियों का भी दौरा किया। इन जगहों पर वे पैदल ही निकल पड़ते थे। वे जनवरी 1947 के आरम्भ से आज़ादी और विभाजन के दिनों तक पीड़ित जनता के बीच इसी तरह घूमते और काम करते रहे।[29] ऐसे में गाँधी को एक अकर्मण्य वृद्ध व्यक्ति के तौर पर आराम से बैठकर चरखा चलाते हुए इंगित करना यह दिखाता है कि या तो कार्टूनिस्ट को ग़लत तथ्य दिये गये या उसने जान बूझकर तथ्यों की अनदेखी की। इस बात से साबित होता है कि इलिंगवर्थ ने ख़ुद को ब्रिटिश अनुदारपंथियों के साथ रखने में कोई कसर नहीं छोड़ी और भविष्य में ब्रिटिश साम्राज्य का भारत से बोरिया-बिस्तर सिमटने की सम्भावना का भी मखौल उड़ाया।[30]

इसी तरह, 28 अगस्त को छपे कार्टून का शीर्षक है- 'रेस हैट्रेड' (आकृति-6)। इसमें माइनॉरिटीज (अल्पसंख्यक) नामक औरत अपने घुटनों पर बैठी मदद की गुहार लगा रही है। एक भयंकर-सा दिखने वाला और ठेठ उत्तर भारतीय पोशाक पहने आदमी उस औरत को बालों से पकड़े हुए है और अपनी तलवार से उसका क़त्ल करने पर आमादा है। चूँकि सारा मोहल्ला इन्हीं भयावह दृश्यों से घिरा है, इसलिए औरत तेज़ी से एक ब्रिटिश अफ़सर के ऑफ़िस में चली गयी है (दीवार पर टँगी टोपी से अफ़सर के ब्रिटिश होने का अंदाज़ा लगाया जा सकता है)। अफ़सर अभी-अभी अपनी आधी बुझी सिगरेट छोड़कर ऑफ़िस से निकला है। उसके निकलने का कारण सम्भवत: उसके टेबल पर पड़ी चिट्ठी है जिस पर लिखा है 'रिननसिएशन ऑफ़ ब्रिटिश सॉवरेंटी' (ब्रिटिश सम्प्रभुता का अंत)। कार्टून में 'रेस' (नस्ल) शब्द का इस्तेमाल आपत्तिजनक है क्योंकि तत्कालीन दंगों के मूल में नस्लीय घृणा के बजाय साम्प्रदायिकता की भावना प्रधान थी।

---

[28] सुचेता महाजन (2000) : 238-53.

[29] मेटकॉफ़ और मेटकॉफ़ (2006) : 218.

[30] बेलिंडा विकहम (1998) : 156.

इस कार्टून के संदर्भ में एक और मुद्दा— ख़ालीपन की धारणा, भी ग़ौर करने लायक़ है, जिसे ब्रिटिश अपने पीछे छोड़ गये हैं। यह इस बात की ओर इशारा करता है कि हिंदुस्तानी नेता, जिन्हें पहले ही कायर, बुज़दिल (आकृति-4) और अकर्मण्य (आकृति-5) साबित कर दिया गया है, अयोग्य भी हैं। इन सभी कार्टूनों में किसी भी तरह के राष्ट्रीय आंदोलन का अस्तित्व पूरी तरह नकार दिया गया है। सभी चित्रों में 'लेडी इंडिया' को समाज और नेताओं द्वारा दी गयी परेशानियों से बचाने के लिए एक बहादुर ब्रिटिश अफ़सर ही सामने आता है।

भारतीय परिस्थितियों पर केंद्रित ये छह कार्टून अपने में बहुत कुछ कहते हैं। एक आम पाठक को इनका गोपनीय मंतव्य सीधे दिखाई नहीं देता। यहाँ भारत, उसका समाज, सामाजिक स्थितियाँ, और उसकी पार्टियों का चित्रण एक अदृश्य डोर की तरह हैं जो इन तत्त्वों को आपस में जोड़ने का काम करती हैं। पहले, इलिंगवर्थ ने जानवरों का जिस तरह उपयोग किया है, वह अलग से ध्यान देने की माँग करता है। यहाँ जब-तब उष्ण देशों के जानवर जैसे हाथी और बाघ दिखाई देते रहते हैं। जहाँ भारत और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को हाथी की तरह दर्शाया गया है, वहाँ दो कार्टूनों में बाघ का उपयोग गृह-युद्ध को दर्शाने के लिए किया गया है। अकाल को एक भूखे भेड़िये की तरह दिखाया गया है। जानवरों के इस मानवीकरण को दूसरे ढंग से पढ़ा जा सकता है। चूँकि इलिंगवर्थ अकसर एक भयानक जंगल, दंगे का दृश्य या आग और उठती हुई लपटों का अपने कार्टूनों में पृष्ठभूमि के तौर पर इस्तेमाल करते हैं, ऐसे चित्रण का एक तात्पर्य भारतीय समाज को जंगली और असभ्य प्रवृत्ति का दिखाना है— एक ऐसा समाज जहाँ बाघ, भेड़िये, और हाथी जैसे जंगली जानवर रहते हैं।

इस लेख के संदर्भ में अगली सबसे महत्त्वपूर्ण बात है महिलाओं का चित्रण। इन कार्टूनों में स्त्री को डरा-सहमा दिखाया गया है। दो जगहों पर उन्हें भारत के प्रतीक के तौर पर चिह्नित किया गया है; तीन चित्रों में उन्हें लोगों के प्रतीक के तौर पर और एक जगह अल्पसंख्यकों के रूप में पेश किया गयाा है। चित्रण का यह दोहराव आकस्मिक नहीं हो सकता। आख़िर इसके पीछे क्या मंतव्य हो सकता है? इसकी एक व्याख्या यह हो सकती है कि इलिंगवर्थ इस सच्चाई की तरफ़ इशारा कर रहे हैं कि साम्प्रदायिक हिंसा और दंगों के अधिकतर मामलों में महिलाएँ ही सबसे ज़्यादा प्रभावित होती हैं। हालाँकि, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यहाँ उद्धृत किसी भी कार्टून में महिला की प्रतिकृति का उपयोग महिला का प्रतिनिधित्व करने के लिए नहीं हुआ है; बल्कि महिला को एक रूपक के तौर पर भारत, यहाँ की जनता, और अल्पसंख्यकों का चित्रण करने के लिए किया गया है। इन महिलाओं की भाव-भंगिमाएँ डर, कमज़ोरी, और बेबसी के अलावा और कुछ नहीं दिखाती। इससे कार्टूनिस्ट की चाल और उसका ध्येय स्पष्ट हो जाता है कि इन सभी चरित्रों को आसन्न संकट से बचाने के लिए शीघ्र मदद की आवश्यकता है। राजनीतिक कार्टूनों में महिलाओं को लैंगिक रूढ़िवादिता का उद्धरण लेकर दर्शाना काफ़ी प्रचलित रहा है। जर्मन एकीकरण पर बने कार्टूनों के अपने अध्ययन में हमने विवरण दिया है कि किस तरह कार्टूनिस्ट औरतों का चित्रण करते हुए रूढ़िवाद और लिंगभेद में रमे रहते हैं।[31] अत: इलिंगवर्थ के काम को भी इसी क्रम में समझा जा सकता है, जहाँ भारत को सामान्य तौर पर एक ऐसे कमज़ोर और दुर्बल प्राणी की तरह दिखाया गया है जिसे अविलम्ब सहायता की ज़रूरत है। और यहीं पर बहादुर ब्रिटिश सिपाही आता है (आकृति- 4) जो औरत की रक्षा करने के लिए बाघ का निडरता से सामना करता है। यह वही दिलेर सिपाही है जो आख़री कार्टून (आकृति-6) में अपनी अनुपस्थिति से कुछ कहने की कोशिश करता है।

इन सभी चित्रांकनों में भारत को नीचा दिखाना, इसके समाज को कमज़ोर, सहमा हुआ, और अकाल, गृह-युद्ध, साम्प्रदायिक दंगों के ख़तरों से भयाक्रांत (और इन सबके लिए ख़ुद ही ज़िम्मेदार

[31] एडवर्ड सईद (1978) : 54-57.

होना) दिखाना अंतर्निहित है। इनमें अंग्रेजों का ख़ुद को रक्षक घोषित करना भी निहित है। हाथी का बारम्बार उपयोग भारत की हठधर्मिता का द्योतक है, जिसे राष्ट्रीय आंदोलन की निरंतरता का संकेत भी माना जा सकता है। इस संबंध में यह भी याद किया जाना चाहिए कि अपनी विशाल ताक़त और भीमकाय आकार के बावजूद हाथी एक ऐसा जानवर है जिसे इंसान अपनी शक्ति से पालतू बना सकता है। इससे यह ध्वनि भी निकलती है कि भारतीयों के प्रति अंग्रेजों का दृष्टिकोण कैसा था। यह भारतीय उप-महाद्वीप को प्राच्यवादियों के चश्मे से देखने का एक आज़मूदा तरीक़ा है। एडवर्ड सईद कहते हैं कि अपने दिमाग़ में एक परिचित स्थान को 'अपना' और अपरिचित स्थान को 'अपने' से परे 'उनका' लक्षित करना पूरी तरह से एकपक्षीय और मनमाना तरीक़ा है। वे आगे कहते हैं कि, ' पूरब के दो पहलू जो इसे पश्चिम से अलग करते हैं... युरोपीय मानस के काल्पनिक भूगोल में स्थायी भाव की तरह मौजूद रहेंगे...युरोप शक्तिशाली और मुखर है; एशिया पराजित और दूरस्थ है।' इस समीकरण में एशिया, 'परिचित सीमा के परे एक ख़ामोश और ख़तरनाक जगह' बन जाता है। यही बात इलिंगवर्थ के रेखा-चित्रों में भी झलकती है। हालाँकि जब हम इस पहलू पर ध्यान देते हैं कि उनके दर्शक कौन थे; वे किस अख़बार के लिए काम करते थे और अपनी ख़बरों के लिए वे किन स्रोतों पर निर्भर करते थे तो भारत का ऐसा चित्रांकन बहुत आश्चर्य की बात नहीं लगती!

संदर्भ

प्राथमिक

कार्टून

'न्यू पालिसी फ़ॉर इंडिया', *डेली मेल,* 13 मार्च, 1942.
'नेहरू राइड्स दी इंडियन एलीफेंट', *डेली मेल,* 2 सितम्बर, 1946.
'फ्री इंडिया', *डेली मेल,* 20 मई, 1947.
'बट कैन दे ?', *डेली मेल,* 17 दिसम्बर, 1946.
'रेस हेट्रेड', *डेली मेल,* 28 अगस्त, 1947.
'सिविल वॉर ऐंड फ़ेमिन थ्रेटन इंडिया', *डेली मेल,* 14 मई, 1946.

प्रकाशित साहित्य

आर्किबाल्ड पर्सिवल वैवेल और पेंडेरल मून (1973) *वैवेल : दी वाइसरॉयज़ जर्नल,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, लंदन.
निकोलस मानसेर्घ एवं पेंडेरल मून (1981), *द ट्रांसफ़र ऑफ़ पॉवर 1942-7,* द स्टेशनरी ऑफ़िस, लंदन.
मार्क ब्रायंट (2009), *इलिंगवर्थ्स वॉर इन कार्टूंस : वन हंड्रेड ऑफ़ हिज ग्रेटेस्ट ड्रॉइंग्ज़ फ्रॉम द डेली मेल,* 1939-1945, ग्रब स्ट्रीट, लंदन.
सुमित सरकार और सब्यसाची भट्टाचार्य (सं.) (2007), *टुवर्ड्स फ्रीडम : डॉक्यूमेंट्स ऑन दी मूवमेंट फ़ॉर इंडिपेंडेंस इन इंडिया,* 1946, भाग 1, ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

ई-स्रोत

http://www.llgc.org.uk
http://www.cartoons.ac.uk

द्वितीयक

इरो सानी, मर्दिजया हयाती अब्दुल्लाह तथा अन्य (2012), 'पॉलिटिकल कार्टूंस एज़ अ व्हीकल ऑफ़ सेटिंग सोशल

एजेंडा : द न्यूज़ पेपर एग़्जैम्पल', *एशियन सोशल साइंस,* अंक 8, सं. 6.

इसाबेल सिमेरल जॉनसन (1937) 'कार्टूंस', द *पब्लिक ओपिनियन क्वार्टरली* , खण्ड 1. अंक 3.

एडवर्ड सईद (1978), *ओरिएंटलिज़म,* रौटलेज एवं कीगन पॉल लिमिटेड, लंदन.

ऐलिजाबेथ रेफ़ई (2003), 'अंडरस्टैंडिंग विज़ुअल मेटॉफ़र : द एग्ज़ैम्पल ऑफ़ न्यूज़पेपर कार्टूंस', *विज़ुअल कम्युनिकेशन,* अंक 2 (1).

थॉमस मिल्टन केमनित्ज़ (1973), 'द कार्टून एज़ अ हिस्टोरिकल सोर्स', द *जर्नल ऑफ़ इंटरडिसिप्लिनरी हिस्ट्री,* खण्ड *4,* सं.1.

बारबरा डाली मेटकॉफ़ और थॉमस आर. मेटकॉफ़ (2006), *अ कंसाइज़ हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न इंडिया,* केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज.

बेलिंडा कार्सटेंस-विकहम (1998), 'जेण्डर इन कार्टूंस ऑफ़ जर्मन युनिफ़िकेशन', *जर्नल ऑफ़ वीमेंस हिस्ट्री,* अंक 10, सं. 1.

मार्टिन जे. मेडहर्स्ट और माइकेल ए. डिसूसा (2009), 'पॉलिटिकल कार्टूंस एज़ रिटोरिकल फ़ॉर्म : टैक्सोनोमी ऑफ़ ग्राफ़िक डिस्कोर्स' *कम्युनिकेशन मोनोग्राफ़्स* 48 (1981).

रितु मेनन और कमला भसीन (1993), 'रिकवरी, रप्चर, रेसिस्टेंस : इंडियन स्टेट ऐंड एब्डक्शन ऑफ़ वीमेन ड्यूरिंग पार्टीशन', *इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 28, अंक 17.

संजुक्ता सुंदेरासन (2006), *ए स्टडी ऑफ़ ग्राफ़िक सैटायर ऐंड कैरीकेचर इन कोलोनियल कैलकटा 1850-1930,* अप्रकाशित शोध-प्रबंध, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली.

सुमित सरकार (1983), *मॉडर्न इंडिया : 1885-1947,* मैकमिलन, चेन्नई.

सुचेता महाजन (2000), *इंडिपेंडेंस ऐंड पार्टीशन : द इरोजन ऑफ़ कोलोनियल पॉवर इन इंडिया,* सेज़ पब्लिकेशंस, नयी दिल्ली.

स्टैनली वॉल्पर्ट (2006), *अ शेमफुल फ़्लाइट : द लास्ट ईयर्स ऑफ़ द ब्रिटिश एंपायर इन इंडिया,* ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफ़र्ड.